खंड: 6, अंक: 4 अप्रैल 2023 DELHIN/2021/84711

संश्लेषण

सी जी एस मासिक पत्रिका

समलैंगिकता: वैधानिकता बनाम सामाजिकता

Aiming High, Touching Sky

सी जी एस
वैश्विक अध्ययन केंद्र
(पूर्वकालिक विकासशील राज्य शोध केंद्र)
दिल्ली विश्वविद्यालय

संपादक

प्रोफेसर सुनील कुमार

निदेशक, वैश्विक अध्ययन शोध केंद्र (पूर्वकालिक विकासशील राज्य शोध केंद्र, डीसीआरसी) एआरसी बिल्डिंग गुरु तेग बहादुर मार्ग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007

ई-मेल आई डी: director@cgs.du.ac.in

प्रोफाइल लिंक: https://cgs.du.ac.in/directorMessage.html

संपादक मंडल

डॉ रमेश कुमार भारद्वाज

सहायक आचार्य, सरकारी पी.जी कॉलेज, जीवाजी विश्वविद्यालय, श्योपुर पाली रोड, मध्य प्रदेश, पिन कोड-476337
संयुक्त निदेशक, वैश्विक अध्ययन शोध केंद्र (पूर्वकालिक विकासशील राज्य शोध केंद्र, डीसीआरसी) एआरसी बिल्डिंग गुरु तेग बहादुर मार्ग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007

ई-मेल आई डी: rkbhardwaj1@cgs.du.ac.in

प्रोफाइल लिंक: https://www.mphighereducation.nic.in

डॉ महेश कौशिक

सहायक आचार्य, श्री अरबिंदो कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, शिवालिक, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017
अध्येता, वैश्विक अध्ययन शोध केंद्र (पूर्वकालिक विकासशील राज्य शोध केंद्र, डीसीआरसी) एआरसी बिल्डिंग गुरु तेग बहादुर मार्ग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007

ई-मेल आई डी: mkaushik@cgs.du.ac.in

प्रोफाइल लिंक: https://www.aurobindo.du.ac.in

डॉ संध्या वर्मा

एसोसिएट प्रोफेसर, श्यामलाल कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, जी. टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-110032
अध्येता, वैश्विक अध्ययन शोध केंद्र (पूर्वकालिक विकासशील राज्य शोध केंद्र, डीसीआरसी) एआरसी बिल्डिंग गुरु तेग बहादुर मार्ग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली-110007

ई-मेल आई डी: sverma@shyamlale.du.ac.in

प्रोफाइल लिंक: https://shyamlale.du.ac.in/wp-content/uploads/2021/11/sandhya-Verma-Political-Science.pdf

डॉ अभिषेक नाथ

सहायक आचार्य, एमएलटी कॉलेज, सहरसा; बी एन मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार।

ई-मेल आई डी: tuesdaytrack@gmail.com

प्रोफाइल लिंक: https://bpsm.bihar.gov.in/Assets2022/AssetDetails.aspx?P1=2&P2=12&P3=239&P4=3

© सीजीएस2024

संश्लेषण

समलैंगिकताः वैधानिकता बनाम सामाजिकता

अनुक्रमिका

संपादकीय

1. समलैंगिकताः सामाजिकता के परिप्रेक्ष्य में — चन्द्रशेखर 1—4
2. भारत में समलैंगिक विवाह की कानूनी मान्यता — रमेश चौधरी 5—14
3. समलैंगिक विवाहः समानता के लिए संघर्ष — चंद्रिका आर्य 15—19
4. समलैंगिकता के प्रति पितृसत्तामक दृष्टिकोण — रजनी 20 —23
5. समकालीन भारतीय समाज में यौन अल्पसंख्यकों का एक सबाल्टर्न परिप्रेक्ष्य — दृष्टि साह 24—31

सम्पादकीय

वैश्विक अध्ययन केंद्र, दिल्ली विश्वविधालय की हिन्दी मासिक पत्रिका संश्लेषण के प्रकाशन की निरंतरता को बनाए रखते हुए इसके इस 57वें अंक को आप सभी सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए अपार हर्ष हो रहा है। यह पत्रिका अपने उद्देश्य के अनुरूप समसामयिक विषयों पर विधार्थीयों एवं शोधार्थीयों के वैचारिक प्रकटीकरण को निरंतर मंच प्रदान करती रही है। यह हिंदी भाषा में लेखन एवं प्रकाशन में व्याप्त रिक्तता को समाप्त करने में अपना अमूल्य योगदान बनाए हुए है।

मौलिक अधिकार, नागरिकों की स्वतंत्रता व समानता की सर्वोत्कृष्टता की व्याख्या करते हैं जो भारतीय संविधान में समाहित हैं। यद्यपि भारतीय संविधान में प्रत्येक व्यक्ति को समान स्थान प्राप्त है। परन्तु वास्तविक अर्थों में समतामूलक समाज प्राप्त करने के लिए कुछ कानूनों में सुधार की आवश्यकता है। समलैंगिकता का विषय उन ज्वलंत विषयों में से है। जिन्हें समाज के ढांचे में ढालने का प्रयास किया जा रहा है। जहां तक वैधानिकता के पक्ष की बात है उस पर विचार करने के लिए भारतीय संसद अधिकृत है एवं इस बारे में किसी भी प्रकार की विधिक व प्रशासनिक रूपरेखा को निर्धारित करने का अधिकार व कार्य मात्र संसद का है।

भारत में समलैंगिक विवाह का विषय वर्तमान राजनीतिक व न्यायिक विचार– विमर्श में अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता देने की मांग वाली याचिका को संविधान पीठ के पास भेज दिया। सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष विवाह अधिनियम 1954 के अंतर्गत समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता देने की मांग करने वाली समलैंगिक युगलों की याचिका पर केंद्र सरकार को नोटिस जारी किया। याचिका में पहले के ऐतिहासिक निर्णयों को आधार बनाया गया है। जिसमें पहला निजता को मौलिक अधिकार के रुप में घोषित करना और दूसरा 2018 में समलैंगिक यौन संबंधों को अपराध की श्रेणी से बाहर करना सम्मिलित है। 2021 में केंद्र सरकार ने दिल्ली उच्च न्यायालय में समलैंगिक विवाह का विरोध करते हुए तर्क दिया था कि भारत में विवाह को केवल तभी स्वीकार किया जा सकता है जब यह एक जैविक पुरुष और जैविक महिला के मध्य हो और जो संतान उत्पन्न करने में सक्षम हो। इस तर्क में केंद्र सरकार ने यह भी कहा था कि किसी कानून की वैधता पर विचार करने में सामाजिक

नैतिकता का विचार प्रासंगिक है और भारतीय लोकाचार के आधार पर ऐसी सामाजिक नैतिकता और सार्वजनिक स्वीकृति को लागू करना विधायिका का काम है।

प्रस्तुत अंक में प्रकाशित समस्त लेख मौलिक है तथा संपादकीय मंडल ने इनकी मौलिकता को किसी भी रूप में प्रभावित एवं परिवर्तित करने का प्रयास नहीं किया है। आप समस्त पाठकों द्वारा इस अंक के संबंध मे प्राप्त प्रतिक्रियाओं के आधार पर हम संश्लेषण के आगामी अंकों में और अधिक गुणवत्ता लाने का प्रयास निरंतर करते रहेंगे।

संपादक मंडल

रविवार, 14 मई 2023

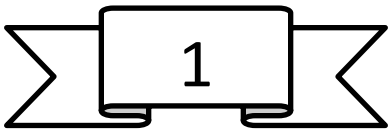

समलैंगिकताः सामाजिकता के परिप्रेक्ष्य में

चन्द्रशेखर

सहायक सूचना एवं जनसम्पर्क अधिकारी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

सभ्य समाज की परिकल्पना तभी सफल व साकार हो सकती है, जब उसमें सभी सदस्यों के लिए सम्मान व स्थान हो। ये सम्मान व स्थान सुनिश्चित करना एक इकाई के रूप में समाज का सामूहिक दायित्व तो है ही, व्यक्तिगत रूप से समाज के सदस्यों का भी कर्तव्य है कि वे न्यायसंगत तथा सभी के लिए प्रतिनिधित्व की अवधारणा को साकार करन वाले समाज के निर्माण में योगदान दें। इस कार्य में सदस्यों का विफल होना समाज की विफलता का आधार सिद्ध हो सकता है, तथा समाज की विफलता उसके सदस्यों के हित व कल्याण में बाधक बन सकती है। ये दोनों बातें आपस में इस प्रकार से जुड़ी हुई हैं कि एक की सकारात्मकता दूसरे की सफलता की मात्रा निर्धारित कर सकती है। समलैंगिकता का विषय उन ज्वलंत विषयों में से है, जिन्हें समाज के उस ढांचे में ढालने का प्रयास किया जाता है, जिसमें इस विषय को लेकर लचीलेपन की कमी स्पष्ट दिखती है।

समाज की प्रगतिशील व उदार होने की अपनी गति हो सकती है। यह गति अनेक पक्षों पर निर्भर करती है। विचारों की स्वच्छंदता, शिक्षा, बाहरी दुनिया के साथ संवाद, रूढ़ियों की गहराई आदि जैसे कई पक्ष हैं, जो समाज के नित प्रगतिशील होने की शीघ्रता तय कर सकते हैं। ऐसे में प्रश्न यह उठता है कि क्या उन विषयों पर, जिनसे लोगों का जीवन सीधे सीधे प्रभावित व परिभाषित होता है, सामाजिक स्वीकार्यता व अनापत्ति की प्रतीक्षा की जाए, और यदि हां तो कब तक? यह प्रतीक्षा तो अनंतकाल तक भी चलती रह सकती है। यहां यह आवश्यक नहीं कि महत्वपूर्ण विषयों पर उतावलेपन व धैर्य हीनता के साथ जैसे तैसे किसी भी नतीजे पर पंहुचा जाए, ताकि यह कहा जा सके कि उक्त समाज समय के साथ परिवर्तित हो रहा है। अपितु आवश्यक यह है कि विषय विशेष पर पर्याप्त वांछित चर्चा व मंथन हो, जिससे कि उससे संबंधित विभिन्न विषयां, चिंताओं व चुनौतियों के विविध पक्षों को लेकर आवश्यक जागरूकता व संवेदनशीलता बनी रहे तथा सर्व

स्वीकार्य नहीं तो कम से कम व्यापक तौर पर स्वीकार्य समाधान खोजे जा सकें। समाज की प्रगतिशीलता की गति इन विविध पक्षों को लेकर जागरूकता से सीधे सीधे संबद्ध है। सामान्य रूप से असहजता उत्पन्न करने वाले विषयों पर समाज आसानी से खुलापन नहीं अपनाता, क्योंकि समाज आमतौर पर अलिखित नियमों में बधां होता है, जिनका भले ही कोई वैधानिक महत्व अथवा प्रासंगिकता न हो, सामाजिक तौर पर उनकी जड़ें काफी गहराई तक जमी होती हैं। यहां वैधानिक पक्ष वह आधार तैयार करने का कार्य करता है, जो अन्यथा सामाजिक रूप से न जाने कब बने। ऐसी संभावनाओं से कतई इनकार नहीं किया जा सकता कि समाज सुधारात्मक रवइय्ये के प्रति उदासीन बना रहे व परिवर्तन से दूरी बनाए रखे। ऐसे में वैधानिक रूप से प्राप्त मान्यता कम से कम जटिलताओं व घुटन से भरे समाज में सांस लेने के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन तो मुहैया करा ही सकती है।

वर्ष 2014 का ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को अपने लिंग का चयन करने का अधिकार देने संबंधी ऐतिहासिक नाल्सा निर्णय हो, वर्ष 2017 में निजता के अधिकार को मूलभूत अधिकार मानने संबंधी फैसला हो अथवा वर्ष 2018 में समलैंगिक संबंधों को अपराध की श्रेणी से बाहर करन वाला निर्णय हो, भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक अवसरों पर ऐसे तमाम पथ–प्रवर्तक निर्णय दिये हैं, जिन्होंने सामाजिकता की कसौटी पर खरे नहीं उतर रहे विषयों पर वैधानिक व्यवस्था स्थापित की तथा समाज को सभी के लिए अनुकूल बनाने का मार्ग प्रशस्त किया। उक्त तीनों निर्णयों ने हाशिये पर धकेल दिये गए समाज के उन सदस्यों को सम्मानपूर्ण जीवन जीने तथा अपने जीवन की दिशा तय करने के लिए आवश्यक निर्णय करने की स्वतंत्रता दी। तथापि, समलैंगिकता व ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के विषय पर भारतीय समाज में ऐतिहासिक रूप से ऐसा कुछ नहीं मिलता, जिसके आधार पर इन समुदायों के प्रति कठोरता या भेदभाव को न्यायसंगत ठहराया जा सके। विडम्बना ये है कि इसके बावजूद समाज में इन वर्गों के उत्थान व कल्याण के बारे में गंभीरता का अभाव दिखा और आखिरकार न्यायालयी हस्तक्षेप से ही इन वर्गों को वैधानिक रूप से पहचान प्राप्त हुई। भारतीय संस्कृति, कला व ज्ञान परंपरा में ऐसे उल्लेख अवश्य मिलते हैं, जो समाज के सभी वर्गों के प्रति समभाव व सम्मान प्रकट करते हैं, किन्तु समाज में इन वर्गों को लंबे समय तक हाशिये पर धकेला जाता रहा, यह अत्यंत चिंताजनक रहा।

समलैंगिक संबंधों को अपराध की श्रेणी से बाहर करने के पश्चात अगला महत्वपूर्ण पड़ाव समलैंगिक व्यक्तियों के विवाह या उनके पारस्परिक संबंधों को वैधानिक मान्यता का है। यह विषय माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है। यह विषय अत्यंत जटिल है और केवल दो व्यक्तियों के

संबंधों को वैधानिक दर्जा देने तक ही सीमित नहीं है, अपितु उन्हें विपरीतलिंगी जोड़ों के समान अधिकार व लाभ देने का विषय भी इसमें सम्मिलित है। इस विषय पर एक पक्ष का मानना है कि वैधानिकता के पक्ष पर विचार करने के लिए भारतीय संसद अधिकृत है एवं इस बारे में किसी भी प्रकार की विधिक व प्रशासनिक रूपरेखा को तय करने का अधिकार व कार्य मात्र संसद का है। वहीं, दूसरे पक्ष का विचार है कि राजनीतिक नेतृत्व द्वारा ऐसे विषयों पर कार्रवाई में समय लगेगा और कितना यह भी नहीं कहा जा सकता। इस पक्ष का मानना है कि इस विषय पर राजनीतिक नेतृत्व की नीति आम सामाजिक भाव व रुझान से प्रेरित होने की आशा है, जो आवश्यक नहीं कि प्रभावित होने वाले व्यक्तियों के हित में ही हो।

समलैंगिक विवाह को मान्यता देने के विरोधी तर्क देते हैं कि यह विषय व्यापक तौर पर सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है, अतः इस संबंध में सामाजिक स्तर पर और विस्तृत संवाद व चर्चा की आवश्यकता है, एवं इस संबंध में निर्णय एक संक्षिप्त व सीमित अवधि में तर्कों व जिरहों के आधार पर नहीं लिया जाना चाहिए। उनका विचार है कि इस विषय का उत्तर सामाजिक मंथन से निकलकर आना चाहिए, जो संसद द्वारा पारित व्यवस्था के रूप में परिलक्षित हो। यद्यपि, समलैंगिक विवाह का समर्थक पक्ष तर्क देता है, कि यह विषय एक लंबी कालावधि से समाज के समक्ष रहा है, किन्तु समाधान तो मिला नहीं, अपितु भेदभाव का सामना और करना पड़ा एवं हाशिये पर रहने को बाध्य होना पड़ा। इस पक्ष की राय है कि भारतीय संविधान में प्रदत्त मूलभूत अधिकारों के अंतर्गत उन्हें जीवन–साथी के चयन का भी अधिकार है और यह अधिकार सामाजिक बंधनों, मान्यताओं व अपेक्षाओं से ऊपर होना चाहिए।

तार्किक तौर पर देखा जाए तो यह सही भी है। भारत के पवित्र संविधान की दृष्टि में सभी नागरिक एक समान हैं और सभी के अधिकार भी बराबर हैं, ऐसे में गरिमा के साथ जीवन जीने के दो नागरिकों के अधिकारों में अन्तर को कैसे तर्कसंगत ठहराया जा सकता है। किन्तु क्या सामाजिक व्यवस्था व समाज के नजरिये व मान्यताओं को एक सिरे से अनदेखा किया जा सकता है। तर्क देने वाले तो यह भी कहते हैं कि विवाह की अवधारणा पारम्पिक रूप से विषम–लिंगी समाज की अवधारणा है, ऐसे में समलैंगिक व्यक्तियों के संदर्भ में विवाह का प्रश्न ही नहीं उठता। लेकिन यहां प्रश्न शब्दावली के तकनीको पक्ष पर वाद–विवाद का नहीं है। विवाह का सामान्य रूप से अर्थ दो ऐसे व्यक्तियों का (पारंपरिक रूप से पुरुष व स्त्री) एक दूसरे के साथ जीवन व्यतीत करने की व्यवस्था से लिया जाता है, जो एक दूसरे से प्रेम भी करते हैं। विषमलिंगी समाज की आधारभूत व्यवस्थाओं में से एक विवाह का एक प्रमुख उद्देश्य संतान की उत्पत्ति भी है। तो यहां 'विवाह' शब्द

एवं अवधारणा के प्रयोग को लेकर आपत्ति को सिरे से नजरअंदाज भी नहीं किया जा सकता। हालांकि, जब विवाह का एक प्रमुख आधार एक दूसरे से प्रेम कर रहे दो व्यक्तियों की साथ में जीवन व्यतीत करने की प्रतिबद्धता है, ऐसे में समलिंगी समाज के लिए विवाह का विचार इतना कठिन व अकल्पनीय सा क्यों प्रतीत हो रहा है। इसी आधार पर ही तो वे विवाह के अधिकार की मांग कर रहे हैं। विवाह के दूसरे प्रमुख उद्देश्य संतान की उत्पत्ति का जहां तक प्रश्न है, ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिनमें लोग या तो अविवाहित रहते हैं, विवाह के पश्चात् भी संतान उत्पत्ति नहीं करते, या कुछ मामलों में किसी कारणवश निःसंतान रह जाते हैं। ये सभी लोग भी उसी समाज का सदैव हिस्सा बने रहते हैं। ऐसे में संतान उत्पत्ति के उद्देश्य के दृष्टिकोण से भी समलिंगी व्यक्तियों को विवाह के अधिकार से दूर रखना कितना उचित है, यह मंथन योग्य विषय है। एक बार के लिए समलैंगिक व्यक्तियों के संदर्भ में "विवाह" शब्द के प्रयोग की आपत्ति को मान भी लिया जाए, तो यह देखने की जरूरत है कि उन्होंने प्रमुख प्रश्न शब्दावली को लेकर नही, अपितु अपने संबंध को वैधानिक मान्यता को लेकर खड़ा किया गया है। संभवतः इस प्रश्न का उत्तर सामाजिक सांचे में मिलने की संभावना न दिखते हुए ही संविधानिक व्यवस्था व प्रावधानों के माध्यम से राहत पाने के उद्देश्य से यह विषय आज शीर्ष अदालत के समक्ष है।

निश्चित तौर पर समाज से मिलने वाली स्वीकार्यता सबसे महत्वपूर्ण है और इसका कोई स्थानापन्न नहीं है, क्योंकि अंततः व्यक्ति को समाज में ही रहना है। किन्तु समाज के उसे स्वीकार करने के लिए तैयार होने तक वैधानिक व्यवस्था वो वातावरण तैयार करने में सहायक सिद्ध हो सकती है, जो सामाजिक बदलाव लाने के लिए आवश्यक है। हर समाज अपने आप में अनेक लघु समाजों को समेटे हुए होता है। क्या इन विभिन्न समाजों के संघर्ष से एक समग्र, समतापूर्ण व सौहार्दपूर्ण समाज की परिकल्पना साकार हो सकती है? एक अन्य विचारयोग्य प्रश्न यह है कि अपने कुछ सदस्यों को तर्कसंगत अधिकार व समानता प्रदान करने से समाज संकट में आएगा या और सशक्त होगा। विशेष रूप से वह समाज जो विकासोन्मुखी है। तेजी के साथ प्रगति कर रहे तथा वैश्विक पटल पर सभावनाओं से भरपूर एक देश की छवि वाले भारत का नागरिक समाज क्या अधिकारों से वंचित तबकों को सशक्त करने से कमजोर हो जाएगा? क्या समाज अपने कुछ सदस्यों को मुख्यधारा से विमुख रखकर आगे बढ़ सकता है? इन प्रश्नों का उत्तर खोजने की कवायद के बीच सामाजिकता को पुनर्परिभाषित करने का प्रयास समय की मांग है।

♦♦♦♦♦

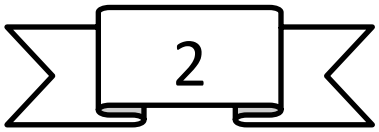

भारत में समलैंगिक विवाह की कानूनी मान्यता

रमेश चौधरी

शोधार्थी, अफ्रीकी अध्ययन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

मौलिक अधिकार, नागरिकों की स्वतंत्रता और समानता की सर्वोत्कृष्टता की व्याख्या करते हैं जो भारतीय संविधान में समाहित हैं। हालांकि भारतीय संविधान प्रत्येक व्यक्ति को समान मानता है, परन्तु सही मायने में समतामूलक समाज हासिल करने के लिए कुछ कानूनों में सुधार की आवश्यकता है। समता की बात करते समय व्यक्तियों के मध्य उनके यौन रूझानों के आधार पर समानता को इसके दायरे से बाहर का विषय नहीं माना जाना चाहिए। नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ मामले में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ने भारत में LGBTQ समुदाय के लिए समानता की शुरुआत की। लेकिन, मानवाधिकारों की एक संपूर्ण कड़ी हासिल करने के लिए समुदाय को अभी भी एक लंबी यात्रा तय करनी है। भारत में समलैंगिक युगलों के लिए समलैंगिक संबंधों और समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता जैसे मानव अधिकार अभी भी एक अप्राप्त लक्ष्य है।

भारत में समलैंगिक विवाह का विषय वर्तमान राजनीतिक और न्यायिक गलियारों के विमर्श में काफी महत्वपूर्ण रहा है। हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता देने की मांग वाली याचिका को संविधान पीठ के पास भेज दिया। सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष विवाह अधिनियम (SMA), 1954 के तहत समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता देने की मांग करने वाली समलैंगिक युगलों की याचिका पर केंद्र सरकार को नोटिस जारी किया। याचिका में पहले के ऐतिहासिक फैसलों को आधार बनाया गया है, जिसमें पहला निजता को मौलिक अधिकार क रुप में घोषित करना और दूसरा 2018 में समलैंगिक यौन संबंधों को अपराध की श्रेणी से बाहर करना शामिल है। 2021 में केंद्र सरकार ने दिल्ली उच्च न्यायालय में समलैंगिक विवाह का विरोध करते हुए तर्क दिया था कि भारत में विवाह को केवल तभी स्वीकार किया जा सकता है जब यह एक जैविक पुरुष और जैविक महिला के मध्य हो और जो संतान उत्पन्न करने में सक्षम हो। इस तर्क में केंद्र सरकार ने यह भी कहा था कि किसी कानून की वैधता पर विचार करने में सामाजिक

नैतिकता का विचार प्रासंगिक है और भारतीय लोकाचार के आधार पर ऐसी सामाजिक नैतिकता और सार्वजनिक स्वीकृति को लागू करना विधायिका का काम है।

'LGBTQ' शब्द उस व्यापक श्रेणी के लोगों को संदर्भित करता है जो लिंग और जेंडर की विषमलैंगिक समझ से बाहर हैं। इस शब्द की कोई निर्णायक परिभाषा नहीं है और इसलिए परिवर्णी शब्द का प्रयोग अक्सर श्श चिन्ह के साथ किया जाता है जिसका निहितार्थ यह कि यह सामूहिकता संपूर्ण नहीं है। हालाँकि यह शब्द लेस्बियन, गे, बायसेक्सुअल, ट्रांसजेंडर और क्वियर के लिए उपयोग किया जाता है। जबकि लेस्बियन, गे, बायसेक्सुअल व्यक्तियों की यौन प्राथमिकताएँ हैंय ट्रांसजेंडर एक ऐसा लिंग है जो पुरुष और महिला लिंग के द्विआधारी से पहचान नहीं रखता है। 'क्वियर' शब्द का प्रयोग मोटे तौर पर सामूहिक समुदाय की अपनी लैंगिकता की अज्ञानता व अनभिज्ञता को दर्शाने के लिए किया जाता है अन्य शब्द जैसे इंटरसेक्स, अलैंगिक (असेक्सुअल) आदि, सभी इसी शब्द के अंतर्गत आते हैं। यह एक जटिल शब्द है जिसके लिए मानव जीवन के पहलुओं के रूप में जेंडर और लैंगिकता की समझ की आवश्यकता है। इस लेख का उद्देश्य भारत में समलैंगिक विवाह की कानूनी मान्यता के विभिन्न सामाजिक–कानूनी पहलुओं को समझने का प्रयास करना है, इस लेख में हाल के घटनाक्रमों, विशेषकर LGBTQ+ समुदाय के वैवाहिक अधिकारों के प्रश्न के संदर्भ में भी समझने का प्रयास किया जायेगा।

भारत में समलैंगिक विवाह

समलैंगिक विवाह से अभिप्राय दो समलैंगिक व्यक्तियों के संबंध की कानूनी मान्यता से है। यह समलैंगिक युगलों को वही कानूनी और सामाजिक मान्यता, अधिकार और विशेषाधिकार प्रदान करता है जो पारंपरिक रूप से बच्चों को गोद लेने, संपत्ति के अधिकार, विरासत संबंधी अधिकार विवाह से जुड़े हैं। समलैंगिक विवाह की मान्यता दुनिया भर में अलग–अलग है, कुछ देश इसकी कानूनी वैधता को स्वीकार करते हैं जबकि अन्य नहीं। धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और कानूनी विचारों के आधार पर समलैंगिक विवाह के विरुद्ध तर्कों के साथ यह मुद्दा बहुत बहस और विवाद का विषय रहा है।

भारत में वर्तमान सन्दर्भ में समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं है। समलैंगिकता को अपराध मानने वाली भारतीय दंड संहिता की धारा 377 को 2018 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने रद्द कर दिया, जो देश में LGBTQ अधिकारों के लिए एक ऐतिहासिक निर्णय था। हालाँकि, अभी भी ऐसा कोई कानून नहीं है जो समलैंगिक युगलों को कानूनी तौर पर विवाह करने या उनके

संबंधों को कोई कानूनी मान्यता देने की अनुमति देता हो। वास्तव में, भारत में विवाह के लिए कोई एकीकृत कानून भी नहीं है। किसी व्यक्ति के समुदाय और धर्म के आधार पर, एक भारतीय नागरिक को यह चुनने का अधिकार है कि कौन सा विवाह कानून उन पर लागू होगा। इसके परिणामस्वरूप कई विवाह कानून बने हैं, लेकिन इनमें से कोई भी संहिताबद्ध विवाह कानून स्पष्ट रूप से एक पुरुष और एक महिला के बीच विवाह को परिभाषित नहीं करता है, न ही यह स्पष्ट रूप से समलैंगिक विवाह पर रोक लगाता है।

2020 में हिंदू विवाह अधिनियम 1955] विशेष विवाह अधिनियम 1954 और विदेशी विवाह अधिनियम 1969 के तहत समलैंगिक विवाह को वैध करने की मांग करते हुए जनहित याचिकाएं (पीआईएल) दायर की गईं। केंद्र सरकार ने दिल्ली उच्च न्यायालय में हलफनामा देकर समलैंगिक विवाह का विरोध किया। केंद्र सरकार के विरोध के कारण इन तीन जनहित याचिकाओं को खारिज कर दिया गया, ये मामले निम्न है–

• हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के तहत

मानवाधिकार कार्यकर्ता अभिजीत अय्यर मित्रा, गोपी शंकर मधुराई, गीति थडानी और जी. ओरवसी द्वारा 2020 में अभिजीत अय्यर मित्रा और अन्य बनाम भारत संघ मामले में यह तर्क देते हुए कि हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के तहत समलैंगिक युगलों के लिए विवाह का अधिकार मौजूद है के आधार पर दिल्ली उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की गई थी। याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया हिंदू विवाह अधिनियम विषमलैंगिक और समलैंगिक विवाह के बीच अंतर नहीं करता है, अगर इसे शब्दों के अनुसार देखा जाए। हिंदू विवाह अधिनियम में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि विवाह वास्तव में किन्हीं दो हिंदुओं के बीच संपन्न हो सकता है। याचिका में एक घोषणा की मांग की गई है जिसमें कहा गया है कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 5 समलैंगिक और विषमलैंगिक युगलों के मध्य अंतर नहीं करता है और जिसके आधार पर समलैंगिक युगलों को हिंदू विवाह अधिनियम के तहत विवाह करने का अधिकार दिया जाना चाहिए।

• विशेष विवाह अधिनियम, 1954 के तहत

दो समलैंगिक महिलाएं, कविता अरोड़ा और अंकिता खन्ना ने अक्टूबर 2020 में दिल्ली उच्च न्यायालय में यह तर्क देते हुए कि विशेष विवाह अधिनियम 1954 युगलों पर उनके लिंग या यौन

रुझानों की परवाह किए बिना लागू होने के आधार पर मुकदमा दायर किया जो कि डॉ. कविता अरोड़ा एवं अन्य बनाम भारत संघ के नाम से जाना जाता है। याचिकाकर्ताओं ने अपने वकील के माध्यम से तर्क दिया कि समलैंगिक विवाह को मान्यता देने से इनकार करना भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 का उल्लंघन है। याचिका में यह भी तर्क दिया गया है कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 और अनुच्छेद 19 अपने व्यापक दायरे के तहत किसी की पसंद के व्यक्ति से शादी करने के अधिकार की रक्षा करता है और यह अधिकार समलैंगिक युगलों पर भी लागू होना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे विषमलैंगिक युगलों के साथ होता है।

• विदेशी विवाह अधिनियम, 1969 के तहत

वैभव जैन और अन्य बनाम भारत संघ के मामले में, दो समलैंगिक पुरुष वैभव जैन और पराग विजय मेहता ने 2017 में वाशिंगटन डी.सी. में शादी की, उनका तर्क था कि विदेशी विवाह अधिनियम, 1969 समलैंगिक संबंधों पर लागू होना चाहिए और उनके अनुसार यह असंवैधानिक है क्योंकि यह इसे मान्यता नहीं देता है।

दिल्ली उच्च न्यायालय में न्यायमूर्ति राजीव सहाय और न्यायमूर्ति आशा मेनन की खंडपीठ ने तीन याचिकाओं पर सुनवाई की और केंद्र सरकार से मामलों पर उसकी प्रतिक्रिया मांगी। केंद्र सरकार ने समलैंगिक विवाह का विरोध किया और दिल्ली उच्च न्यायालय से केंद्र सरकार द्वारा अपने जवाब में दिए गए निम्नलिखित तर्कों के आधार पर याचिकाओं को खारिज करने के लिए कहाः

• नवतेज सिंह जौहर मामले पर केंद्र सरकार की दलीलः

केंद्र सरकार ने अपने जवाब में तर्क दिया कि नवतेज सिंह जौहर मामले में दिया गया फैसला केवल एक विशेष मानव व्यवहार को अपराध की श्रेणी से बाहर करता है लेकिन न तो इस निर्णय में न्यायपालिका का इरादा था और न ही वास्तव में, प्रश्नगत मानवीय आचरण को वैध बनाना था। केंद्र सरकार ने यह भी तर्क दिया कि नवतेज सिंह जौहर मामले में सर्वोच्च न्यायालय का फैसला दो समलैंगिक व्यक्तियों द्वारा विवाह करने के अधिकार की स्थिति में मौलिक अधिकार को शामिल करते हुए निजता के अधिकार का विस्तार नहीं करता है।

• सामाजिक नैतिकताः

केंद्रीय कानून और न्याय मंत्रालय ने समलैंगिक विवाह के मामले में यह तर्क देते हुए उत्तर दिया कि विपरीत लिंग के व्यक्तियों के लिए विवाह को सीमित करने में वैध राज्य हित मौजूद है। किसी कानून की वैधता पर विचार करने में सामाजिक नैतिकता का विचार अत्यंत आवश्यक और प्रासंगिक है और भारतीय नैतिकता व लोकाचार के आधार पर ऐसी सामाजिक नैतिकता और सार्वजनिक स्वीकृति को लागू करना विधायिका का कर्तव्य है।

• समलैंगिक विवाह मौजूदा कानूनों के अनुरूप नहीं है

याचिकाकर्ताओं ने कविता अरोड़ा एवं अन्य बनाम भारत संघ मामले के तहत याचिका में दावा किया है कि संविधान का अनुच्छेद 21 अपने व्यापक दायरे के तहत किसी की पसंद के व्यक्ति से शादी करने के अधिकार की रक्षा करता है, और यह अधिकार उसी प्रकार समलैंगिक युगलों पर भी लागू होना चाहिए जिस प्रकार विषमलैंगिक युगलों को प्राप्त है। केंद्र सरकार ने उसी पर अपनी राय देते हुए तर्क दिया कि, अनुच्छेद 21 के तहत मौलिक अधिकार कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अधीन हैं और इसे उन कानूनों के तहत मान्यता प्राप्त समलैंगिक विवाह के मौलिक अधिकारों को शामिल करने के लिए विस्तारित नहीं किया जा सकता है जो वास्तव में इसके विरोधी है।

• विवाह की पवित्रता के संबंध में चिंताएँ

केंद्र ने अपने उत्तर में समलैंगिक विवाह पर अपने रुख का समर्थन करते हुए कहा कि साथी के रूप में या समलैंगिक व्यक्ति के साथ संबंध में रहना पति, पत्नी और बच्चों की "भारतीय परिवार इकाई अवधारणा" के साथ तुलनीय नहीं है, यह तर्क दिया कि विवाह संस्था की अपनी पवित्रता है। केंद्र सरकार ने यह भी तर्क दिया कि, एक जैविक पुरुष और एक जैविक महिला के बीच विवाह के संबंध की वैधानिक मान्यता के बावजूद, भारत में विवाह अनिवार्य रूप से सदियों पुराने रीति–रिवाजों और सामाजिक मूल्यों पर निर्भर है, और समलैंगिक युगलों के लिए भी यह आवश्यक है कि ऐसा संबंध समाज द्वारा मान्यता प्राप्त हो और सामाजिक मूल्यों के अनुरूप हो।

समलैंगिक विवाह की कानूनी मान्यता पर बहस

18 अप्रैल 2023 को, सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष विवाह अधिनियम (1954) के तहत समलैंगिक विवाह को वैधता देने की मांग संबंधी याचिकाओं पर सुनवाई शुरू की। 1954 का विशेष विवाह अधिनियम उन युगलों के लिए विवाह का कानूनी रूप प्रदान करता है जो अपने व्यक्तिगत कानूनों और धार्मिक मान्यताओं के तहत विवाह नहीं कर सकते हैं। जबकि मामले के मुख्य याचिकाकर्ता सुप्रियो और

अभय डांग का तर्क है कि समलैंगिक विवाह को मान्यता न देना संवैधानिक भेदभाव के समान है जो स्ळठज्फ़ युगलों की वैयक्तिकता, गरिमा और आत्म–सम्मान की बुनियाद पर प्रहार करता है, कई धार्मिक निकाय और गैर सरकारी संगठन यह दावा करते हुए अदालत में पहुंच गए कि भारतीय समाज समलैंगिक विवाहों को वैधता देने लिए तैयार नहीं है। उनके औचित्य में विवाह की परिभाषा से लेकर दो पुरुषों या दो महिलाओं के साथ माता–पिता के रूप में बड़े होने का बच्चों पर पड़ने वाले मनोवैज्ञानिक प्रभाव जैसे मुद्दे शामिल हैं।

भारत के मुख्य न्यायाधीश डी वाई चंद्रचूड़, न्यायमूर्ति एस के कौल, न्यायमूर्ति एस आर भट्ट, न्यायमूर्ति पी एस नरसिम्हा, और न्यायमूर्ति हिमा कोहली की संविधान पीठ भारत में समलैंगिक विवाहों को कानूनी मान्यता देने की मांग करने वाली इन याचिकाओं पर सुनवाई कर रही थी। केंद्र सरकार ने समलैंगिक और विषमलैंगिक विवाह की समानता के खिलाफ रुख अपनाया है, जिसमें कहा गया है कि ऐसा निर्णय न्यायपालिका की अपेक्षा संसद के दायरे में आता है और याचिका का मुद्दा "शहरी अभिजात्य विचारों" को दर्शाता है और जिसे भारतीय लोकाचार के आधार पर आम जनता द्वारा स्वीकार नहीं किया जाएगा। सुप्रीम कोर्ट के समक्ष दायर एक हलफनामे में सरकार ने दावा किया कि समलैंगिक युगलों का साथी के रूप में एक साथ रहना और यौन संबंध बनाना भारतीय परिवार इकाई की अवधारणा के समान नहीं है। सरकार ने यह तर्क दिया कि भारतीय परिवार इकाई की अवधारणा एक जैविक पुरुष और जैविक महिला के इर्द–गिर्द घूमती है, जिनके विवाह से बच्चे पैदा होते हैं। केंद्र सरकार ने भी न्यायालय से आग्रह किया कि वह पहले याचिकाओं की विचारणीयता पर निर्णय ले।

सर्वोच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार के सभी दावों को खारिज कर दिया कि समलैंगिक विवाह और समलैंगिक अधिकार "शहरी अभिजात्य अवधारणाएं" हैं। संविधान पीठ की अध्यक्षता करते हुए भारत के मुख्य न्यायाधीश डी वाई चंद्रचूड़ ने कहा कि शहरी क्षेत्रों में अधिक लोग अपनी यौन पहचान उजागर कर रहे हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि सरकार के पास यह सुझाव देने के लिए सबूत हैं कि समलैंगिक विवाह शहरी अभिजात वर्ग तक ही सीमित हैं। न्यायाधीश ने कहा कि राज्य व्यक्तियों के खिलाफ उनकी जन्मजात विशेषताओं के आधार पर भेदभाव नहीं कर सकता, जो उनके नियंत्रण से परे हैं। ये टिप्पणियाँ केंद्र सरकार की इस दलील के जवाब में थीं कि समलैंगिक विवाहों को मान्यता देने की मांग करने वालों का प्रतिनिधित्व करने वाली याचिकाएं केवल शहरी अभिजात्यवादी विचार हैं। सरकार ने यह भी तर्क दिया कि विधायिका को समाज के सभी वर्गों के व्यापक विचारों पर विचार करना चाहिए।

समलैंगिक विवाह को मान्यता देने के पक्ष में तर्क

भारत में समलैंगिक विवाहों को कानूनी मान्यता देने के पक्ष में कई तर्क हैः

• समानता प्रदान करनाः समानता और गैर–भेदभाव को बढ़ावा देने के लिए समलैंगिक विवाहों को वैध बनाना महत्वपूर्ण है। सभी व्यक्तियों को, चाहे उनका यौन रुझान या लैंगिक पहचान कुछ भी हो, उनको विवाह करने और अपने संबंधों को कानून के तहत मान्यता देने का अधिकार होना चाहिए। यह संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 द्वारा समर्थित है, जो लिंग के आधार पर भेदभाव पर रोक लगाता है। सुप्रीम कोर्ट ने नवतेज सिंह जौहर (2018) मामले में 'लिंग' की व्याख्या यौन रूझान तक कर दी है। इस प्रकार, समलैंगिक युगलों को विवाह के अधिकार से वंचित करना यौन रुझानों के आधार पर भेदभाव का एक स्पष्ट मामला है।

• निजता का अधिकार सुनिश्चित करनाः निजता के अधिकार में किसी के शरीर और शारीरिक संबंधों के संबंध में विकल्प चुनने की क्षमता शामिल है। यह बात समलैंगिक युगलों पर भी लागू होती है। 2017 में सुप्रीम कोर्ट के केएस पुट्टास्वामी फैसले ने इसे संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार के हिस्से के रूप में स्वीकार किया। व्यक्तियों के प्रति किसी भी भेदभाव या उत्पीड़न के बिना इस अधिकार का सम्मान किया जाना चाहिए।

• मानवाधिकारों का विस्ताररू समलैंगिक विवाह एक मानवाधिकार का मुद्दा है, संयुक्त राष्ट्र ने LGBTQ अधिकारों के महत्व को पहचाना है और LGBTQ समुदाय के व्यक्तियों के मानवाधिकारों की सुरक्षा का आह्वान भी किया है, जिनमें विवाह करने का अधिकार भी शामिल है।

• सामाजिक स्वीकृति और मानवीय गरिमा को बढ़ावा देनाः समलैंगिक विवाह को वैध बनाने से एलजीबीटी व्यक्तियों और संबंधों की सामाजिक स्वीकृति को बढ़ावा मिलेगा और भेदभाव को कम करने में मदद मिलेगी। नवतेज सिंह जौहर बनाम भारत संघ मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने समलैंगिक जोड़ों को सम्मानजनक निजी जीवन जीने की आजादी दी।

• जैविक पुरुष और महिला पूर्ण अवधारणा नहीं हैः भारत के सर्वोच्च न्यायालय का कहना है कि जैविक पुरुष और जैविक महिला का विचार पूर्ण नहीं है, और जेंडर किसी के जननांगों से भी अधिक जटिल है। पुरुष या महिला की कोई पूर्ण अवधारणा नहीं है।

• "अधिकारों का गुलदस्ता अस्वीकार किया जा रहा हैः LGBTQ समुदाय को विवाह की अनुमति न देकर कर लाभ, चिकित्सा अधिकार, विरासत और गोद लेने जैसे महत्वपूर्ण कानूनी अधिकारों और विशेषाधिकारों से वंचित किया जा रहा है। विवाह केवल समलैंगिक युगलों की गरिमा का विषय नहीं है, बल्कि अधिकारों का संग्रह भी है।

समलैंगिक विवाह की कानूनी मान्यता के विरुद्ध में तर्क

भारत में समलैंगिक विवाहों को वैधता प्रदान करने के विरुद्ध कुछ तर्क शामिल हैंः

• नवतेज सिंह जौहर मामलाः 2018 नवतेज सिंह जौहर फैसले ने समलैंगिकता को अपराध की श्रेणी से हटा दिया, लेकिन इसमें समलैंगिक विवाह का उल्लेख या वैधीकरण नहीं किया गया।

• धार्मिक एवं सांस्कृतिक मान्यताओं के विरुद्धः कई उदार लोकतंत्रों से भिन्न भारत में विवाह, उत्तराधिकार और गोद लेने के पहलू धार्मिक व्यक्तिगत कानूनों द्वारा शासित होते हैं। जहां तक विवाह का प्रश्न है, हिंदू, ईसाई और शरीयत कानून, रीति रिवाज और प्रथागत कानून के अलावा सिर्फ विषमलैंगिक जोड़ों के साथ धार्मिक विवाह को नियंत्रित करते हैं। धार्मिक निकायों ने समलैगिंक विवाह का विरोध किया है, जिसमे श्री सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा और जमीयत–उलमा–ए–हिंद प्रमुख है। श्री सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा ने कहा कि समलैंगिक विवाह विनाशकारी हैं और इसका भारतीय संस्कृति और समाज पर हानिकारक प्रभाव पड़ेगा। जमीयत–उलमा–ए–हिंद ने भी समलैंगिक विवाह का विरोध करते हुए कहा कि विपरीत लिंगों के बीच विवाह, विवाह और परिवार की मूल विशेषता है।

• जीवनसाथी (Likmt) की परिभाषाः समलैंगिक विवाह में, विभिन्न धार्मिक व्यक्तिगत कानूनों की विधायी पक्ष के संदर्भ में एक को पति और दूसरे को पत्नी कहना न तो संभव है और न ही व्यवहार्य है।

• विवाह की पारंपरिक परिभाषा के विरुद्धः विवाह की पारंपरिक परिभाषा एक पुरुष और एक महिला के मध्य है और इस परिभाषा को बदलने से समाज पर नकारात्मक परिणाम पड़ सकते हैं। केंद्र सरकार ने सुप्रीम कोर्ट में अपने हलफनामे में तर्क दिया है कि समलैंगिक विवाह को मान्यता देने से धार्मिक व्यक्तिगत कानूनों की व्यवस्था में विनाश हो सकता है। सरकार ने यह भी दावा किया है कि विवाह एक नीतिगत मामला है जिसका निर्णय केवल संसद और कार्यपालिका द्वारा किया जाना है।

• सामाजिक व्यवधान और अशांतिरू समलैंगिक विवाहों को वैध बनाने से सामाजिक विघटन और संघर्ष हो सकता है। भारतीय समाज में समलैंगिक विवाह को व्यापक रूप से स्वीकार नहीं किया जाता है और इसे वैध बनाने से अशांति पैदा हो सकती है और सामाजिक मानदंडों और मूल्यों को बाधित करने की संभावना है। इससे भविष्य में बहुविवाह जैसे विवाह के अन्य रूपों को चलन शुरू हो सकता है ।

• कानूनी जटिलताएँः समलैंगिक विवाहों को कानूनी मान्यता मिलने से कानूनी जटिलताएँ पैदा हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, गोद लेने, बच्चे की अभिरक्षा और किशोर न्याय अधिनियम 2015 से संबंधित मुद्दे। राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (NCPCR) ने भी तर्क दिया कि समलैंगिक विवाह से किशोर न्याय अधिनियम के प्रावधानों के संबंध में जटिलता उत्पन्न होगी, क्योंकि किशोर न्याय अधिनियम 2015 एक अकेले पुरुष को या दो पुरुषों को भी एक बालिका को गोद लेने से रोकता है।

भारत में समलैंगिक विवाह की कानूनी मान्यता पर बहस निरंतर एक विवादास्पद मुद्दा बना हुआ है, सरकार और याचिकाकर्ता समलैंगिक विवाह के संदर्भ में परस्पर विरोधी विचार और हित प्रस्तुत कर रहे हैं। हालाँकि, जटिल सामाजिक, सांस्कृतिक और कानूनी विचारों को देखते हुए समलैंगिक विवाह के संबंध में किसी भी निर्णय का सावधानीपूर्वक मूल्यांकन किया जाना चाहिए ताकि समावेशी और व्यक्तिगत आधिकारों का सम्मान सुनिश्चित किया जा सके। अंततः, एक संतुलित और न्यायसंगत समाधान पर पहुंचना महत्वपूर्ण है जो यौन रुझानों की परवाह किए बिना सभी व्यक्तियों के लिए समानता और गैर–भेदभाव के सिद्धांत को कायम रखे।

संदर्भ सूचीः

- Shukla, Priya Kumari. *Same-sex marriage in India – urban elite concept or integral right?.* Indian Express (2023)
- Bhogle, Satchit bhogle. *The Momentum of history – Realising Marriage equality in India.* NUJS Law Review (2019)
- Kumar, R. Venkadesh & Arulkannappan. *A Study on the legal recongtion of same sex marriage.* IJPAM (2018)
- Narrian, Siddharth & ohdedar Birsha, *Same Sex marriage and other queer relationships in India – A legal perspective.* ISSUU (2011)
- Mayhur, Aneesha, *Centre opposes pleas to recognize same sex marriage under Special Marriage Act.* India Today (2021)
- Economic Times. *Delhi high court asks Centre to respond to plea to recognize same sex marriages under law*. (2020)
- Ahsan, Sofi. *Centre opposes same sex marriage in Delhi HC, says not comparable with 'Indian family unit concept'.* Indian Express (2021)
- Reddy, Adithya. *Same-sex marriage: morality vs equality.* The Hindu (2023)
- O'Brien, Derek. *Same-sex marriage: queer Indians fighting the good fight.* Indians Express (2023)

♦♦♦♦♦

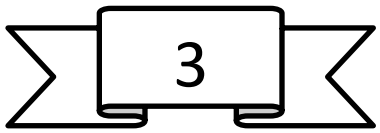

समलैंगिक विवाहः समानता के लिए संघर्ष

चंद्रिका आर्य

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

भारत में समलैंगिक विवाह को कानूनी वैधता प्रदान ना होने के कारण पिछले कुछ दिनों से यह एक विवादास्पद मुद्दा बना हुआ है। भारत में समलैंगिक विवाह के संबंध में कानूनी प्रक्रिया कुछ स्पष्ट नहीं है। भारत का संविधान स्पष्ट रूप से समलैंगिक विवाह पर रोक नहीं लगाता है परंतु भारत में विवाह संबंध की अवधारणा काफी हद तक व्यक्तिगत या समाज द्वारा निर्मित कानूनों से संचालित होती है। भारत में विवाह की अवधारणा सब धर्मों के धार्मिक कानूनों द्वारा शासित होती है। भारत में अधिकांश धार्मिक समूह समलैंगिक विवाह को मान्यता नहीं देते हैं। इस संदर्भ में भारत के सर्वोच्च न्यायालय में समलैंगिकता को अपराध की श्रेणी से अलग कर दिया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 377 को रद्द करके भारत की न्यायपालिका ने समान लिंग वाले व्यक्तियों के मध्य सहमति से बनने वाले यौन संबंधों को अपराध की श्रेणी स हटा दिया है। भारत की न्यायपालिका का यह निर्णय एलजीबीटीक्यू समुदाय के अधिकारों को मान्यता देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है परंतु इस कानूनी सुधार के तहत समलैंगिक विवाह को मान्यता प्रदान नहीं की गई है।

सरकार का रुख

वर्तमान समय में भारत की न्यायपालिका में समलैंगिक विवाह को कानूनी सुरक्षा प्रदान करने के निर्णय पर मंथन जारी है। इस मामले में समलैंगिक विवाह के पक्षधर लोगों का मानना है कि समान लिंग वाले लोगों को विवाह के अधिकार से वंचित रखना उनके साथ समानता के अधिकार का उल्लंघन करना है। भारत का कानून विशेष विवाह अधिनियम 1954 में स्पष्ट रूप से लिखित है की केवल महिला और पुरुष को एक दूसरे से विवाह के बंधन में बंधने की स्वतंत्रता का प्रावधान है। समलैंगिक विवाह को कानूनी वैधता प्रदान कराने के लिए न्यायालय में याचिका दर्ज कराने वालों की राय है कि इस संदर्भ में कानून की भाषा जेंडर न्यूट्रल होनी चाहिए। इसके ठीक विपरीत

केंद्र सरकार का मानना है कि समलैंगिक विवाह का अधिकार सरकार को कानून की भाषा में परिवर्तन करने को बाध्य नहीं कर सकता है। सरकार समलैंगिक विवाह की अवधारणा को सामाजिक मान्यताओं से जोड़कर देख रही है उनका कहना है कि समलैंगिक विवाह के अधिकार को वैधता प्रदान की गई तो समाज पर इसके दुष्परिणाम देखने को मिलेंगे। साथ ही इससे कई अन्य कानूनों के प्रावधान भी प्रभावित होंगे।

समलैंगिक विवाह पर भारतीय सरकार की राय कानूनी व्याख्या से जुड़ी है। सरकार का मानना है कि समलैंगिक विवाह को विशेष विवाह अधिनियम के अंतर्गत नहीं रखा जा सकता। अगर ऐसा करते हैं तो इससे पूरा कार्य प्रभावित होगा हमें पूरे कानून की संरचना में परिवर्तन करने की आवश्यकता होगी। उदाहरण के तौर पर हम देख सकते हैं कि विशेष विवाह अधिनियम पत्नी को कुछ विशेष अधिकार देने की बात करता है परंतु समलैंगिक विवाह में यह स्पष्ट नहीं होगा कि यह विशेष अधिकार किसके पास होंगे। इसके अलावा समलैंगिक विवाह में एक पक्ष को कुछ विशिष्ट अधिकार देने का प्रावधान विषम लैंगिक विवाह में कुछ समस्याएं उत्पन्न कर सकती है। समलैंगिक विवाह को कानूनी वैधता ना देने के पीछे सरकार यह दलील दे रही है कि भारत में विशेष विवाह अधिनियम पत्नी को कुछ विशेष अधिकार प्रदान करता है जैसे कि विवाह के पश्चात पत्नी पति का अधिवास प्राप्त करेगी परंतु समलैंगिक विवाह के संदर्भ में यह प्रश्न होगा कि वैवाहिक संबंध में पत्नी और पति कौन?

समलैंगिक विवाह पर सरकार द्वारा दिए गए कथन किसी विशेष समुदाय को उसके अधिकार ना देने के पीछे कोई तार्किक कारण नहीं है। समाज में किसी व्यक्ति विशेष समुदाय को मूलभूत अधिकारों से इसलिए वंचित नहीं किया जा सकता कि इसमें कानून की तेजी दिया शामिल हैं। जनता ने सरकार का चुनाव अपने अधिकारों की सुरक्षा, समस्याओं के समाधान तथा अपने कल्याण के लिए किया है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में सरकार का दायित्व है कि वह किसी भी समुदाय में या व्यक्ति में किसी प्रकार का कोई भेदभाव न करके सभी के लिए समान अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करें। जटिल कानूनी परिदृश्य के नाम पर किसी एक समुदाय को मूलभूत अधिकारों से वंचित नहीं किया जा सकता। अगर किसी मामले में स्थापित कानून कोई विरोधाभास पैदा करता है तो ऐसे में सरकार का दायित्व है कि नागरिकों या किसी समुदाय के अधिकारों की सुरक्षा के लिए नए कानूनों का निर्माण करें। समलैंगिक विवाह के संदर्भ में अगर सरकार कानूनी भाषा को एक अवरोधक बता रही है तो इसका समाधान है कि कानूनी भाषा को जेंडर न्यूट्रल किया जाए जैसे कि पति–पत्नी नामक शब्दों के स्थान पर जीवनसाथी नामक शब्द का प्रयोग किया जाए।

समलैंगिक विवाह को कानूनी वैधता देने के पीछे सरकार का एक पक्ष यह भी है कि वर्ष 2017 में भारत की न्यायपालिका ने निजता के अधिकार को एक मूलभूत अधिकार के रूप में मान्यता प्रदान की जिसके अनुसार यौन उन्मुखता किसी भी व्यक्ति की पहचान का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसे बिना किसी भेदभाव के संरक्षित किया जाना चाहिए। इसमें भारतीय राज्य की राय है कि भले ही भारत में निजता एक मूलभूत अधिकार है परंतु इसे विवाह तक विस्तारित नहीं किया जा सकता क्योंकि यौन संबंध निजी होते हैं परंतु विवाह का एक सार्वजनिक पक्ष होता है जिसको नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। भारत में विवाह केवल दो व्यक्तियों के बीच में बनने वाला संबंध नहीं है बल्कि यह दो परिवारों व समाज के मध्य में बनने वाला संबंध है।

समलैंगिक विवाह के मामले पर सरकार संसद के विधान निर्माण के अधिकार पर भी बल दे रही है। राज्य का पक्ष है कि समलैंगिक विवाह पर कानून बनाना लोकतांत्रिक अधिकार का मामला है जिसमें केवल संसद ही कानून बना सकती है। इसमें न्यायालय को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

समलैंगिक विवाह और सामाजिक सांस्कृतिक परंपराएं

सरकार के अलावा समाज का भी बहुत बड़ा तबका ऐसा है जो समलैंगिक के अधिकार का विरोध करता है। इनका मानना है धर्म और संस्कृति के आधार पर समलैंगिक विवाह को मान्यता नहीं दी जा सकती क्योंकि समलैंगिक विवाह से समाज का ढांचा प्रभावित होगा और परिवार नाम की संस्था पर भी संकट आएगा। समान लिंग वाले लोगों का वैवाहिक संबंध हमारी संस्कृति का हिस्सा नहीं है अगर हम ऐसे अधिकार को कानूनी पहचान देते हैं तो समाज में इसके दुष्परिणाम देखने को मिलेंगे। समाज का यह वर्ग समलैंगिक विवाह को मान्यता देने पर समाज पर पड़ने वाले प्रभाव की समीक्षा को एक बड़ा मुद्दा मानता है। इन बुद्धिजीवियों का मानना है कि विवाह पति–पत्नी के मध्य का एक पवित्र बंधन है। यह मानव जीवन के 16 संस्कारों मे से एक संस्कार है जो समाज को मजबूत करता है। यह वर्ग समलैंगिक विवाह को कानूनी वैधता मिल जाने के बाद भी सामाजिक मान्यता मिलने को एक चुनौतीपूर्ण कार्य मानते हैं क्योंकि इनका कहना है किस समलैंगिक विवाह की अवधारणा भारत के सामाजिक मूल्यों परंपराओं और मान्यताओं के विरुद्ध है।

परंतु कोई भी परंपरा या मान्यता केवल इस तर्क के आधार पर सही सिद्ध नहीं हो सकती कि वह सदियों से चली आ रही है। सामाजिक परम्पराओं के नाम पर समलैंगिक विवाह का विरोध करने वालों को यह बात समझनी चाहिए कि समलैंगिक विवाह की मान्यता समाज में विद्यमान संबंधों की विविधता में और योगदान करेगी। भारत जैसे प्रगतिशील, उदार और समावेशी सभ्यता में

समलैंगिक विवाह सामान्य होना चाहिए। समलैंगिक विवाह को अप्राकृतिक बताकर इसका विरोध करने वालों को यह समझना होगा कि यह अप्राकृतिकता भी प्रकृति की ही देन है।

समान वैवाहिक अधिकार के लिए कुछ आवश्यक कदम

कानूनी वैधता के साथ–साथ समलैंगिक विवाह को सामाजिक स्वीकृति मिलना भी एक बड़ी चुनौती है। समलैंगिक विवाह को समाज में स्वीकार किया जाए इसके लिए सरकार कुछ महत्वपूर्ण कदम उठा सकती है। स्हइजु समुदाय के लोगों की यौनिक उन्मुखता को लेकर सरकार के लिए आवश्यक है कि वह नागरिकों के बीच जागरूकता पैदा करें। इसके अलावा आम नागरिकों का भी कर्तव्य है कि वह इस समुदाय के लोगों की प्रकृति के विषय में जानकारी रखें तथा उनके अधिकारों का भी सम्मान करें। जागरूकता अभियानों का उद्देश्य हो कि वह समाज में लिंग के आधार पर विविधताओं के मध्य समानता स्थापित करें तथा सामाजिक स्वीकृति को बढ़ावा दे।

समलैंगिक विवाह की अवधारणा को समाज में समान रूप से स्वीकार किया जाए इसके लिए कुछ कानूनी सुधारों की आवश्यकता है। इस संदर्भ में विशेष विवाह अधिनियम में आवश्यक संशोधन जाए जिससे कि समलैंगिक युगलो को विवाह करने की कानूनी रूप से वैधता प्रदान हो तथा समलंगिक नागरिक अन्य नागरिकों की तरह ही समान अधिकार तथा विभिन्न लाभों का उपभोग कर सकें। कानूनी ढांचे को एक अवरोधक के रूप में प्रस्तुत ना कर सरकार के लिए आवश्यक है कि कानून के आधार पर ही समलैंगिक विवाह की संकल्पना को वैधता प्रदान करें तथा समाज में व्यापक स्तर पर इसकी स्वीकृति को लेकर आवश्यक कार्यक्रम चलाएं।

यदि समलैंगिक विवाह को लेकर समाज के कुछ वर्गों के बीच संस्कृति तथा परंपराओं को लेकर समलैंगिक विवाह की अवधारणा में कोई विवाद है तो इस दिशा में धर्मगुरु, परंपरा वादी तथा आधुनिक सोच रखने वाले वर्गों के बीच संवाद और संलग्नता भी महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हो सकते है। धार्मिक नेताओं और समुदायों के साथ संवाद को बढ़ावा देने से समलैंगिक संबंधों के प्रति पारंपरिक मान्यताओं और आधुनिक दृष्टिकोण के बीच के अंतर को भरने में मदद मिल सकती है।

समलैंगिक विवाह को कानूनी वैधता तथा सामाजिक स्वीकृति देने के लिए विभिन्न हित धारकों की ओर से पहल किए जाने की आवश्यकता है। LGBTQIA समुदाय, सरकार, नागरिक समाज और धार्मिक नेताओं सहित सभी हितधारकों के मध्य एक गहन चर्चा के परिणाम स्वरूप सहमति बनाने की आवश्यकता है। परस्पर संवाद तथा सहमति से ही हम एक समावेशी समाज का निर्माण कर सकते हैं जहां सभी व्यक्तियों को चाहे उनकी यौनिक उन्मुखता जो भी हो उन्हें अपनी इच्छा से

विवाह करने का अधिकार होगा। इसमें समान कानूनी व्यवस्था एक अहम भूमिका अदा करेगी। बिना लैंगिक रुझान के सभी नागरिकों को समान अधिकार सुनिश्चित किए जाने चाहिए।

निष्कर्ष

समलैंगिक विभाग की संकल्पना को मानव अधिकार की दृष्टि से देखा जाना चाहिए। मानवाधिकार का मुद्दा अब हमारे देश में एक केंद्रीय बहस बन गया है, जहां व्यक्तियों का एक समूह हाशिये पर पड़े समुदाय के रूप में कानूनी मान्यता और समर्थन की मांग कर रहा है। भारतीय संविधान सभी नागरिकों को अपनी पसंद के व्यक्ति से विवाह करने का अधिकार देता है और यौन रुझान के आधार पर भेदभाव पर रोक लगाता है और उनकी याचिका को अनुमति दी जानी चाहिए क्योंकि संवैधानिक नैतिकता सामाजिक नैतिकता से ऊपर नहीं हो सकती।

♦♦♦♦♦

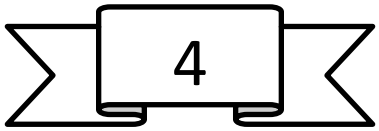

समलैंगिकता के प्रति पितृसत्तामक दृष्टिकोण

रजनी

शोधार्थी, जवाहरलाल नेहरू विश्व विद्यालय

यौनिकता की अवधारणा किसी व्यक्ति की यौन इच्छा का अनुभव करने की क्षमता और एक विशिष्ट लिंग, पुरुष या महिला के प्रति उनके भावनात्मक और यौन आकर्षण से संबंधित है। कुछ व्यक्ति समान लिंग के लोगों के प्रति आकर्षित महसूस करते हैं, जबकि अन्य विपरीत लिंग के प्रति आकर्षित होते हैं। यौंनिकता को पहचाने जाने में कई बार अधिक समय लगता हैं। समाज के भीतर, यौंनिकता से जुड़ी पहचान को सामान्य रूप से चार अलग–अलग समूहों में वर्गीकृत किया जाता है– जो विपरीत लिंग के प्रति यौन रुझान प्रदर्शित करते हैं उन्हें विषमलैंगिक कहा जाता ह। पितृसत्तात्मक समाजों में, विषमलैंगिकता, यौंन पहचान को स्वीकार किया गया है। विषम लैंगिकता को समाजिक कानून और रूढ़िवादी समाज द्वारा स्वीकार किया जाता है। इसके विपरीत, जो व्यक्ति समान लिंग के प्रति आकर्षण महसूस करते हैं, उनकी यौनिक पहचान को समलैंगिकता का नाम दिया जाता है। दुर्भाग्य से, पितृसत्तात्मक समाज में समलैंगिकता को एक बीमारी या अभिशाप के रूप में देखा जाता है। इसलिए समलैंगिक यौनता की पहचान रखने वाले पर समाजिक संरचना के भीतर विभिन्न यौनिकता को विशिष्ट ढाँचे के रूप में विषम–लैंगिकता के अनुरूप व्यवहार करने के लिए सामाजिक दबाव बनाया जाता है। तीसरे प्रकार की यौंनिकता पहचान भी होती हैं जिसे उभयलिंगीपन के नाम से जाना जाता है, जिसमें पुरुषों और महिलाओं दोनों के प्रति आकर्षण होता हैं। इसके अतिरिक्त, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है किसी विशिष्ट लिंग के प्रति किसी का विशेष यौन रुझान नही होना भी यौनिकता की पहचान का एक सामान्य हिस्सा हैं।

यौनता से जुड़ी सभी पहचान प्राकृतिक हैं। इसके बावजूद समलैंगिकता को समाज में वैध और व्यापक रूप से स्वीकार नहीं किया जाता है। समाज में, यौनता की समलैंगिक पहचान वालों को न केवल अपनी असली पहचान छुपाने का भारी बोझ झेलना पड़ता है, अपितु समाज के द्वारा दंडित भी होना पड़ता हैं। जिसके कई बार समलैंगिको को मृत्यु जैसे गंभीर परिणाम को झेलना पड़ता हैं। पितृसत्तात्मक ढांचे के भीतर समलैंगिक महिलाएं प्रायरू समलैंगिक पुरुष समकक्षों की

तुलना में उच्च स्तर के शोषण और उत्पीड़न का अनुभव करती हैं। ध्यान रहे समाजिक ढाँचे के भीतर ,पुरुषों की तुलना में, समलैंगिक महिलाएं कभी–कभी अपनी समलैंगिकता को पूरी तरह से अपनाने में अधिक झिझकती हैं। जिसके कारण एक समलैंगिक महिला को,स्वयं की यौनता स जुड़ी असली पहचान से दूरी बनाने के लिए मजबूर होना पड़ता है। एमाजॉन. प्राइम पर 2022 की फिल्म मांजा मां में, मुख्य अभिनेत्री पल्लवी पटेल (माधुरी दीक्षित द्वारा अभिनीत) एक समलैंगिक चरित्र की भूमिका को निभाया गया हैं। इस फिल्म के तहत पल्लवी पटेल सामाजिक और पारिवारिक दबावों के कारण, वह पारंपरिक लिंग भूमिकाओं के अनुरूप रहने और अपनी असली पहचान छिपाने के लिए मजबूर होती है। तारा पटेल, जो एक कॉलेज में नारीवादी कार्यकर्ता है, वो भी माँ के समलैंगिक होने को स्वीकार नही कर पाती हैं। फिल्म के एक सीन में दर्शाया गया कि कुछ लोग महिला के यौनिकता की पहचान का मजाक उड़ाते हुए आपस में बात करते हुए कहते हैं॰ समलैंगिक सबँध में दो औरते क्या करती हैं ?" कहने का अर्थ हैं कि समाज में यह माना जाता हैं कि महिला की यौनिकता की पहचान विषम लैंगिक होती हैं। महिला का समलैंगिक हाना समाज में स्वीकृत नही हैं।

अनौपचारिक रूप से, विषमलैंगिक व्यक्तियों को आमतौर पर स्ट्रेट कहा जाता है, जबकि समलैंगिक पुरुषों और महिलाओं को समलैंगिक या लेस्बियन कहा जाता है। विषमलैंगिक व्यक्तियों से शायद ही कभी यह सवाल किया जाता है कि उन्हें अपने यौन रुझान के बारे में कब पता चला, जबकि समलैंगिकों से उनके यौन रुझान के समय और खोज के बारे में पूछा जाता है (राइल, 2011)।

भारतीय संविधान के, अनुच्छेद 14 और 15 के अंतर्गत भारत के सभी नागरिकों कीयके साथ सामान व्यवहार किए जाने का प्रावधान हैं। संविधान के अनुसार किसी भी नागरिक के साथ धर्म, जाति, नस्ल और लिंग के आधार पर कोई भेदभाव नही किया जाएगा। संवैधानिक प्रावधान को व्यवस्था होने के पश्चात् समाज के समलैंगिक लोग जो समाज के अल्पसंख्यक वर्ग से आते हैं जिनकी यौनिक पहचान, व्यवहार, समाज के बहुमत से भिन्न होते हैं। पुरुष–महिला द्विभाजन के कारण और समाज में यौन अल्पसंख्यकों की पहचान को स्वीकार ना करने से, समलैंगिकों के बुनियादी मानवाधिकारों का उल्लंघन होता हैं। समलैंगिकता के आधार पर समाज में इनके साथ भेदभाव भरा व्यवहार करने वालों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए की यह लोग भी अन्य लोगों की तरह समान अवसरों और अपने अधिकारों की सुरक्षा के पात्र हैं।

प्रत्येक समाज के अपने नियम और कानून होते हैं जिनका उसके सदस्यों से पालन करने की अपेक्षा की जाती है। ऐसा माना जाता है कि ये रीति–रिवाज एक सुचारु और सभ्य समाज को

बनाए रखने में सहायता करते हैं। यदि कोई इन रीति–रिवाजों का उल्लंघन करता है, तो उसे सामाजिक पहचान के लिए खतरे के रूप में देखा जाता है और समाज द्वारा दंडित किया जाता है। यौनिकता की पहचान को समाज में विवाह और प्रजनन से जुड़ा जाता हैं। यौनिकता से जुड़ी पहचान को कई बार धार्मिक संस्था द्वारा नैतिकता का जामा पहनाया जाता हैं। यदि कोई समाज में स्थापित यौनिक पहचान के विपरीत व्यवहार करता हैं तो उसको सभ्य समाज के संकट के रूप में देखा जाता हैं। यही कारण हैं की पितृसतात्मक समाज में समलैंगिक लोगों को उन लागों से तुलना की जाती हैं जो एक विद्रोही के रूप में सामाजिक संरचनाओं को बाधित करने का प्रयास करते हैं। रूढ़िवादी सोच और पितृसता से ग्रस्त मानसिकता वालों का विश्वास होता हैं समलैंगिक संबंध अप्राकृतिक होने के साथ साथ पारिवारिक और सामाजिक मूल्य के लिए संकट होते हैं। भारत में समलैंगिकता को कानूनी स्वीकृत प्राप्त होने पर कई धार्मिक गुरु जैसे जमीयत उलमा–ए–हिंद (जमीयत उल्मा–ए–हिंद भारत के सबसे बड़े मुस्लिम संगठनों में से एक है) के सचिव मौलाना महमूद मदनी ने कहा था इस कानून के आ जाने से नैतिक व्यवहार में कमी आएगी, यौन अपराधों में वृद्धि होगी। इसका बुरा प्रभाव आने वाली युवा पीढ़ी पर पड़ेगा। जो अपनी जिम्मेदारियों से मुक्त होते हुए पश्चिमी देशों के युवा की नकल करता हैं। सभी धार्मिक ग्रंथ में समलैंगिक संबंधों को अप्राकृतिक माना गया हैं। कोई भी धर्म समलैंगिक संबंध को स्वीकार नही करता।

समलैंगिक संबंध के बारे में अपने विचारो को व्यक्त करते हुए प्रसिद्ध मनोचिकित्सक एडमंड बर्गलर ने अपने शोध में कहा था समलैंगिकता एक तरह की बीमारी होती है। इसलिए समलैंगिको को चिकित्सकीय उपचार की मदद लेनी चाहिए। अन्य कुछ मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांतों के अनुसार," बचपन के दौरान समलैंगिक आकर्षण या व्यवहार का अनुभव वयस्कता में विषमलैंगिक संबंध विकसित करने की प्रक्रिया का प्राथमिक चरण है। इसलिए समलैंगिकता को एक अस्थायी चरण माना जाना चाहिए जिसे व्यक्ति अंततः दूर कर लेता हैं। अन्य सिद्धांतकारों ने समलैंगिकता की तुलना, बाएँ हाथ का प्रयोग करने वाले लोगों से करते हुए इसको प्राकृतिक माना हैं। इस सिद्धांत के पक्षधर समलैंगिकता को एक तटस्थ और सामान्य लक्षण मानते हैं, और समलैंगिकता को एक मनोरोग विकार के रूप में वर्गीकृत किए जाने का विरोध करते हुए कहते हैं समलैंगिकता एक प्राकृतिक घटना है और इसे कलंकित नहीं किया जाना चाहिए। समलैंगिक भी भाषाई और धार्मिक अल्पसंख्यकों के समान एक अल्पसंख्यक समूह हैं। इनका यौन संबंधों और गतिविधियों पर एक भिन्न दृष्टिकोण है जो पारंपरिक विचारों से भिन्न होता हैं। समलैंगिकता दो व्यक्तियों क बीच आपसी आकर्षण और भावनाओं पर आधारित एक प्राकृतिक और सहमतिपूर्ण संबंध है। कुछ लोग

अपनी व्यक्तिगत मान्यताओं और सांस्कृतिक मानदंडों के कारण समलैंगिकता अस्वीकार्य करते हुए, इसको प्राकृतिक क्रम के खिलाफ मानते हैं। जैसे की स्वास्थ्य मंत्री गुलाम नबी आजाद समलैंगिक संबंधों में शामिल होना एक तरह की बीमारी है। समलैंगिकता दो हताशा, असफल, नाउम्मीद लोगों द्वारा पारस्परिक सहमति से व्यवहार किया गया है, इससे बचने की आवश्यकता है। कुछ चीजें प्रतिबंधित ही रहें तो बेहतर है। रेप के लिए सजा है। कल को ऐसे मानवी भी सामने आ सकते हैं जो कहे हैं कि यह व्यक्ति का अपना अधिकार है। उसके मन में भावना उठी, उसने रेप कर लिया। हर मन में काम–वासना होती है, इसमे क्या गलत है? कल यह भी मांग उठ सकती है कि चोरी, डकैती को भी अधिकार बनाया जाए। जो ताकतवर है, वो किसी को लूट सकता है। रिश्वत को भी कानूनी बना दिया जाए। अगर इसी तरह समाज की सोच गतिमान रही, तो वह समय भी आयेगा, जिसे हम जंगल–राज का नाम दे सकते हैं। इसलिए समलैंगिकता को व्यक्तिगात अधिकार नही बनाया जाना चाहिए। यह एक तरह का सामाजिक अपराध हैं। भारतीय समाज में, समलैंगिकता अपराध मानना चाहिए या नही इसको लेकर काफी समय तक लोगों के बीच बहस का एक मुद्दा बना हुआ था। सुप्रीम कोर्ट की पांच जजों की बेंच ने 6 सितम्बर 2018, को समलैंगिकता को अपराध की श्रेणी से बाहर करते हुए कहा समलैंगिकता किसी तरह का अपराध नहीं हैं। यह व्यक्ति की यौनता से जुड़ी पहचान का एक हिस्सा हैं। हर किसी को समान रूप से जीने का मौलिक अधिकार है। सितम्बर 2018 से पहले भारत में समलैंगिकता को अपराध आईपीसी की धारा 377 के तहत अपराध माना जाता था। सर्वोच्च न्यायालय ने इस धारा की वैधानिकता को रद्द कर दिया है। सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा ने कहा देश में सभी को समानता का अधिकार है। समाज की सोच बदलने की जरूरत है।

LGBTQ अधिकारों के बारे में एक सार्वजनिक भाषण के दौरान, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति डी.वाई. चंद्रचूड़ ने कहा समानता के लिए केवल समलैंगिकता को अपराध की श्रेणी से बाहर कर देना ही काफी नहीं है। समलैंगिक व्यक्तियों को सार्वजनिक स्थानों पर एक आम उपस्थिति होनी चाहिए, अपवाद नहीं।

♦♦♦♦♦

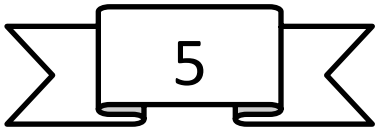

समकालीन भारतीय समाज में यौन अल्पसंख्यकों का एक सबाल्टर्न परिप्रेक्ष्य

दृष्टि साह

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

सबाल्टर्न लोगों के उन समूह के रूप में है जो एतिहासिक लेखन में कोई स्थान नहीं पाते हैं और सामाजिक और राजनीतिक पदानुक्रम में जिन्होंने उदासीनता, अज्ञानता और अलगाव का सामना किया है। इस दायरे में, लेख एक लैंगिक विश्लेषण होगा, जिसमें यौन अल्पसंख्यकों पर विशेष ध्यान दिया जाएगा, जिन्हें सबाल्टर्न समूह के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। यौन अल्पसंख्यकों की अभिव्यक्ति को उन लोगों के समूहों के साथ समझा जाना चाहिए जो समाज के मुख्यधारा के लोगों से अपने व्यक्तित्व लक्षणों में भिन्न हैं। इस पेपर में समलैंगिकों और भारतीय समाज में उनके एकीकरण पर सबाल्टर्न नजरिए से विश्लेषण पर अधिक बल दिया गया है। इसके अलावा, पेपर समलैंगिक समूह को तीन अलग–अलग मापदंडों में प्रासंगिक बनाने का प्रयास करेगा, जैसे कि मान्यता, अधिकार और नतीजे, कुछ अलग–अलग प्रदर्शनों, पत्रिकाओं और फिल्मों के माध्यम से उनकी यौन पहचान के नतीजे, जिन्होंने समकालीन काल में समलैंगिकों के जीवन को व्यक्त किया है। दूसरे भाग में, पेपर समलैंगिकों की आवाज को संबोधित करेगा जो राजनीतिक क्षेत्र में अपने अधिकारों की मांग करते हैं। अंत में, पेपर समकालीन भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी पहचान के संकट के कारण उनके सामने आने वाले नतीजों और चुनौतियों को रेखांकित करेगा।

सबाल्टर्नः एक वैचारिक विश्लेषण

ऐतिहासिक रूप से, सबाल्टर्न शब्द का पता एंटोनियो ग्राम्सी के लेखन की अवधि से लगाया जा सकता है। पहली बार, सबाल्टर्न शब्द का उपयोग उनके द्वारा उन समूहों या वर्गों को संदर्भित करने के लिए किया गया था, जो लोगों के प्रमुख समूह के बीच अधीनस्थ के रूप में रैंकों में हीन थे। ग्राम्सी के लिए, सबाल्टर्न समूह या वर्ग नागरिक समाज और राज्य के साथ जैविक संबंध में समान नहीं थे। इस प्रकार, राज्य में ऐतिहासिक एकता के लिए, सबाल्टर्न वर्ग का अध्ययन आदिम

सामाजिक समूहों में उनकी उत्पत्ति से किया जाना चाहिए जो प्रमुख समूह के प्रति सक्रिय या निष्क्रिय संबद्धता दिखाएंगे।

प्रमुख समूहों का उद्देश्य सबाल्टर्न समूहों की सहमति को संरक्षित करना और उन पर नियंत्रण रखना है। सबाल्टर्न समूह न्यूनतम चरित्र का अपना संघ बनाने की कोशिश करते हैं जो ढांचे के भीतर एक अभिन्न स्वायत्तता पर जोर देगा। हालांकि, सबाल्टर्न समूह की विशेषताएं इतिहास मं एक परिधीय तत्व का संकेत देती हैं। उन्हें आर्थिक क्षेत्र में होने वाली स्थिति से लेकर शासक वर्ग की गतिविधियों में उनकी स्वतंत्र इकाई की स्थिति तक को खोजा जाता है।

भारतीय इतिहासलेखन में, सबाल्टर्न शब्द का अर्थ सबाल्टर्न अध्ययनों के खंडो से समझा जा सकता है, जिसमें रणजीत गुहा ने सबाल्टर्न शब्द को जाति, वर्ग, लिंग के रूप में शब्दावली के किसी भी रूप में व्यक्त दक्षिण एशियाई क्षेत्रों के अधीनस्थ समाजों के साथ जोड़ा है। उन्होंने उन समूहों का अध्ययन करने की कोशिश की है जो समाज में सबसे कम दिखाई देते हैं जैसे कि लोगों के वे समूह जो पदानुक्रमित सामाजिक व्यवस्था के दायरे में दलित, दबे, या गैर–मान्यता प्राप्त हैं। रणजीत गुहा आदर्श रूप से सबाल्टर्न वर्ग को कुलीन वर्ग और कुल आबादी से जनसांख्यिकीय रूप से अलग बताते हैं। उनका तर्क है कि संभ्रांत इतिहासलेखन द्वारा महिलाओं के प्रयासों को नजरअंदाज और अनदेखा किया गया था। इसलिए, उन्होंने महिलाओं के ऐतिहासिक अनुभवों पर ध्यान केंद्रित किया और उन्हें भारतीय समाज में सबाल्टर्न के रूप में जोड़ा।

समकालीन काल में, सबाल्टर्न की समझ ष्पहचान से सत्ताष् तक संबंधों के दृष्टिकोण के बदलाव का प्रतीक है। यह आम जनता के विचारों के माध्यम से समाज की एक वैकल्पिक छवि पेश करना चाहता है जो आमतौर पर गैर–प्रतिनिधित्व, गैर–मान्यता प्राप्त और असंबद्ध होते हैं जो खुद को समाज के हाशिए पर रखते हैं। सबाल्टर्न की अवधारणा को जाति, वर्ग, लिंग और कामुकता समूहों के बीच उनके चौराहे में विभिन्न सामाजिक संस्थाओं के बीच सत्ता के संबंध में सबाल्टर्नता को एक नया सार दिया गया है। इसलिए, सबाल्टर्न का सिद्धांत सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों के डोमेन में बदलाव को दर्शाता है। इसलिए, सबाल्टर्न वर्गों को भारतीय इतिहास में उदासीनता, अज्ञानता और अलगाव के रूप में समूहों के तीन अलग–अलग गुणों में वर्गीकृत किया गया है, जिनके पास खुद को व्यक्त करने के लिए भाषा नहीं थी। इस तरह, पेपर एक सबाल्टर्न परिप्रेक्ष्य के साथ समकालीन काल से यौन अल्पसंख्यकों के समलैंगिक समूह का एक अध्ययन है ।

यौन अल्पसंख्यकों को समझना

क्वीर शब्द को सामान्य शब्द के रूप में देखा जाता है जिसके तहत गैर–विषमलैंगिक पहचान समलैंगिक या किसी अन्य होने की एक विशेष शब्दावली को निर्दिष्ट करने के बजाय खुद को समावेशी के रूप में संबंधित करती है। इसलिए, यह हमारे समाज के अदृश्य वर्ग को पहचानने और भारत के क्षेत्रों में सक्रिय उनके लंबे समय तक चलने वाले अभियान का पता लगाने को दर्शाता है। चूंकि हम एक ऐसे समाज में रहते हैं जहां हमें बार–बार बताया जाता है कि केवल एक प्रकार की स्वीकार्य इच्छा है जो विवाह की संस्था के भीतर विषमलैंगिक संबंध है, जो लोग विभिन्न प्रकार के संबंधों के बारे में सोचते हैं वे इस महान आदर्श की सीमा से बाहर हैं। इससे समाज में एक नया समूह बना है जो न केवल लैंगिक संबंधों के प्रचलित ढांचे को खारिज करता है बल्कि इसके खिलाफ एक अलग पहचान बनाने के लिए लगातार संघर्ष भी करता है। इस संदर्भ में, लैंगिक कामुकता में विविधता, शरीर और पहचान चर के बीच एक जटिल अंतर्संबंध की भावना देती है। शरीर के आकार का आत्म–संदेश की पहचान के साथ संबंध कि हम कौन हैं। जबकि हम दूसरों के साथ संवाद करते हैं, हम दैनिक जीवन में प्रचलित गतिविधियों, कपड़ों और तौर–तरीकों के विभिन्न तरीकों के माध्यम से अपनी पहचान व्यक्त करने के इच्छुक हैं। इस तरह, लिंग स्पेक्ट्रम को पारस्परिक और अंतर्वैयक्तिक लक्षणों के संदर्भ में स्वयं के विभिन्न पहलुओं के साथ सीखा जा सकता है। यहां इस बारे में बात करना आवश्यक है कि यौन केंद्रित स्वयं को कैसे परिभाषित करता है कि हम रोमांटिक, भावनात्मक और शारीरिक रूप से एक ही सेक्स को गले लगाते हुए कान हैं। उत्तरार्द्ध, लिंग की धारणा का प्रतिनिधित्व करता है, जहां लोग स्वयं की अनूठी विशेषताओं की इच्छा रखते हैं, हम जैविक सेक्स और लिंग के संदर्भ में खुद को कैसे देखते हैं।

पहचान एवं मान्यता की अवधारणा

मान्यता की अवधारणा को चार्ल्स टेलर के लेखन से सबसे अच्छी तरह से समझा जा सकता है, जिन्होंने स्पष्ट रूप से मान्यता की राजनीति तैयार की है। वह एक पहचान के माध्यम से मान्यता का अर्थ व्यक्त करता है। एक पहचान के साथ, हम अपने आप को परिभाषित करते हैं कि हम कौन हैं, हमारे पास क्या विशेषता है और फिर यह पहचान हमारी मान्यता को आकार देती है जिसे हम समाज के व्यक्तियों के बीच सम्मान और गरिमा के रूप में मांगते हैं। उनके लेखन से, मान्यता के द्रष्टिकोण को निजी और सार्वजनिक क्षेत्र में समझा जा सकता है जहां हम पहले स्वयं की पहचान करते हैं और बाद में, समाज में उसी को प्रतिबिंबित करते हैं।

निजी क्षेत्र में, जिन लोगों ने अपनी पहचान को समाज की विषमलैंगिकता से अलग माना है, उन्होंने परिवारों, समाजों और सबसे महत्वपूर्ण रूप से उनके स्वयं के बीच विचित्रता का अनुभव किया है। वे असामान्य कलंक के कारण अपनी पहचान के बारे में बोलने से डरते थे। इसलिए, इस कलंक के साथ लोगों का ये समूह भारतीय समाज के अदृश्य वर्ग बन गए। प्रतीत होता है, हम समलैंगिकों की आवाजें सुन सकते थे जो सार्वजनिक क्षेत्र में अपनी पहचान को पहचानने और संबोधित करने की मांग उठा रहे थे। 1990 के दशक की अवधि ने उन मील के पत्थरों का लेखा–जोखा चिह्नित किया जो हमारे भारतीय समाज में मौजूद लिंग विविधता पर लगातार परिलक्षित हुए हैं। इस लेंस में, हम देश भर में आगे बढ़ने वाली विभिन्न पत्रिकाओं, आंदोलनों और फिल्मों के माध्यम से लोगों के यौन केंद्रित समूह की मान्यता को प्रासंगिक बना सकत हैं।

भारत में, पहली बार हम 1991 में मुंबई नामक सपनों के शहर में प्रकाशित पहली पत्रिका बॉम्बे दोस्त देखी जा सकती हैं। पत्रिका समलैंगिक पुरुषों की जीवन शैली को स्वयं को जानने से लेकर स्वयं तक जीने का विज्ञापन करने का एक प्रयास था। दूसरे शब्दों में, पत्रिका में उनके रिश्ते के लिए उनकी कामुकता, और गंध वातावरण की विशेषता वाले अलग–अलग लेखन थे। समय के साथ, हमने विभिन्न पत्रिकाओं, आंदोलनों और फिल्मों के उद्भव को देखा है जिन्होंने सार्वजनिक क्षेत्र में यौन अल्पसंख्यकों के मुद्दों को जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर अलग–अलग नामों के साथ विभिन्न स्थानों में प्रचलित विषम मानदंडों का मुकाबला करने की परिकाष्ठा को बनाए रखा। इसके अलावा, समकालीन अवधि में, उनकी मान्यता में विशिष्ट होने से सामान्य होने तक बदलाव देखते हैं। उदाहरण क लिए, पहले यौन केंद्रित समूह के लोग समलैंगिक कहे जाने की विशेष पहचान पर जोर देते थे। अब, वे अपनी पहचान के लिए एक सार्वभौमिक शब्द का उपयोग करना पसंद करते हैं क्योंकि वे समलैंगिक शब्द से जुड़े होते हैं।

आगे बढ़ते हुए, लेख अब राजनीतिक क्षेत्र में यौन अल्पसंख्यकों के लिए उनके अधिकारों और समाज में समावेश के लिए बताए गए मील के पत्थर के विकास और विविध कानूनी निर्णयों पर विश्लेषण करेगा।

समावेशन के अधिकार

मानव अधिकार प्रकृति में सार्वभौमिक हैं। मानव अधिकारों के सार्वभौमिक अनुप्रयोग में एक सर्वव्यापी परिप्रेक्ष्य है जो किसी की पहचान और यौन अभिविन्यास सहित मानव जीवन के सभी पहलुओं को पूरा करता है। इस प्रकार, मानव अधिकारों का क्षेत्र लिंग और यौन अल्पसंख्यकों तक भी फैला

हुआ है। इतिहास समलैंगिकों के समूह को समानता और स्वतंत्रता देने के बारे में ज्यादा चिंतित नहीं था। समलैंगिकता प्रदर्शनों के राजनीतिक विषय के प्रकाश में, हम अलग–अलग पहलुओं में अधिकारों के द्रष्टिकोण पर आकर्षित कर सकते हैं। यौन पहचान उनकी कामुकता के कारण हाशिए के अनुभवों के कारण एक समावेशिता और गरिमा की मांग उठाती है। हालांकि, यौन अल्पसंख्यकों के पक्ष में आगे बढ़ने वाली कानूनी समयरेखा को उजागर करना महत्वपूर्ण है।

कानूनी ढांचे की पृष्ठभूमि की समझ औपनिवेशिक युग से देखी जा सकती है जब ब्रिटिश शासन ने भारत में 1861 के वर्ष में भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 377 के तहत समलैंगिक संबंधों पर प्रतिबंध लगा दिया था। कानूनी बयान में समलैंगिक यौन संबंध को अपराध घोषित किया गया था। और यह भी कहा गया है कि प्रकृति के आदेश के खिलाफ किसी भी महिला, पुरुष या जानवर के साथ स्वेच्छा से संभोग में भागीदारी दंडनीय अपराध है और पीड़ित को वर्षों तक कैद किया जाएगा और जुर्माने के लिए उत्तरदायी होगा। आजादी के सत्तर साल बाद भी, यौन अल्पसंख्यकों को समान नागरिकता से वंचित कर दिया गया था। हालांकि, भारत की प्रमुख आवाजों ने आईपीसी की धारा 377 की वैधता पर प्रतिक्रिया व्यक्त की है और यौन अपराधों के अपराधीकरण की धारा को खत्म करने में सफल रहे हैं। समलैंगिकता के अपराधीकरण की यात्रा यौन अल्पसंख्यकों के लिए एक रोलरकोस्टर रही है। हालांकि, कानूनी पहलू पर अधिकारों की लड़ाई अभी भी समलैंगिक समुदाय के लिए एक सपना है। समान–लिंग विवाह की वैधता भागीदारों पर जिम्मेदारियों के अनुरूप है। समलैंगिक जोड़े अभी भी भारत में विवाह के अधिकार से वंचित हैं, इसलिए वे उन देशों के आप्रवासी बनना पसंद करते हैं जहां समान–लिंग विवाह वैध है। इसलिए, समलैंगिक समुदाय ने वर्ष 2018 को एक नए युग के रूप में चिह्नित किया जिसने राजनीतिक और सामाजिक डोमेन में परिवर्तन का रास्ता खोल दिया था। फिर भी, मानवाधिकारों के उदाहरणों की प्रभावकारिता को लिंग या कामुकता की उचित अभिव्यक्ति के साथ व्यक्त करने की आवश्यकता है। अधिकार क्षेत्र को अपनी संकीर्ण तर्कसंगतता से बाहर आने की जरूरत है और हर इंसान को, चाहे वे कोई भी हों और उनकी यौन प्राथमिकताएं हों, खुले दिल से समानता, गरिमा और स्वीकृति के साथ जीवित रहने दें।

समलैंगिकताः नतीजें और चुनोतियाँ

विभिन्न न्यायिक फैसलों के बावजूद, अखिल भारतीय स्तर पर यौन अल्पसंख्यक सामाजिक और राजनीतिक भेदभाव, बहिष्कार के शिकार रहे हैं और अभी भी हैं। भारत सरकार ने समलैंगिक समुदाय से जुड़े कलंक को खत्म करने के लिए जनता को संवेदनशील बनाया है, लेकिन समानता

का अधिकार अभी भी एक महत्वपूर्ण पड़ाव है। यौन अल्पसंख्यकों को अभी भी रोजगार से लेकर स्वास्थ्य और व्यक्तिगत मुद्दों से लेकर पारिवारिक मुद्दों तक विभिन्न क्षेत्रों में भेदभाव का सामना करना पड़ता है। सामाजिक व्यवहार अभी भी क्षेत्रों में कई समलैंगिक लोगों के जीवन के लिए एक चुनौती है। वे अभी भी अपने प्यार की अभिव्यक्ति के साथ कम आंक रहे हैं।

यहां, निजी और सार्वजनिक दोनों जीवन में समलैंगिक सर्कल द्वारा चुनौती दिए गए समाज के व्यवहार संबंधी स्वभाव को संबोधित करना महत्वपूर्ण हो जाता है।

निजी जीवन शैली के साथ शुरू करने के लिए, समलैंगिक समूह अपनी पहचान के साथ एक चरम विकृति से गुजरता है। जिस क्षण वे आत्म–पहचान के बारे में महसूस करते हैं, वे खुद को मुख्यधारा की भलाई से अलग होने के कलंक से जोड़ लेते हैं। अस्वीकृति, यौन छेड़छाड़, भेदभाव की भावना व्यक्ति को मानसिक रूप से परेशान करती है। वे अक्सर अवसाद, उच्च रक्तचाप, तनावपूर्ण की शिकायत करते हैं। यह उन्हें अपने मानसिक स्वास्थ्य से निपटने के लिए मनोचिकित्सक के नियमित दौरे की ओर ले जाता है। भावनात्मक विकार ों वाले व्यक्ति को कमजोर कार्यों के प्रति अधिक अनिच्छुक होने की संभावना है जो उनके जीवन को जोखिम में डाल सकते हैं। मानसिक अशांति अंततः उनके आत्मसम्मान और आत्मविश्वास को कम कर देती है जो स्वयं और समाज से अलगाव की ओर बढ़ती है। अलग, अज्ञानी होने की इस भावना ने कई आत्मघाती प्रयासों और यहां तक कि ज्यादातर ग्रामीण क्षेत्रों में मौतें भी की हैं। तदनुसार, एक समलैंगिक कबीले से संबंधित बहुत से लोग पारस्परिक प्रतिक्रिया के कारण अपने परिवार के सदस्यों को अपनी वास्तविक पहचान का खुलासा करने में संकोच करते हैं। परिवारों के बीच विविध लिंग उन्मुखता पर समझ की कमी समलैंगिक लोगों के आत्म–मूल्य को तोड़ने का कारण बनती है।

सार्वजनिक जीवन शैली के पक्ष में, हमारे पास समलैंगिकता के जवाब में समाज का एक होमोफोबिक रवैया है। समाज का स्वभाव सार्वजनिक जीवन में गरिमा और बंधुत्व मूल्यों के नैतिक सिद्धांतों के खिलाफ चलता है। समाज का लापरवाह व्यवहार स्कूलों से लेकर रोजगार तक के दूर के क्षेत्रों में समलैंगिकों को हाशिए पर डाल देता है और बाहर कर देता है। स्कूल डोमेन में, समलैंगिक युवा अपने सहकर्मी समूहों को अपनी पहचान प्रकट करने में अधिक संकोच करते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि वे उत्पीड़न, बदमाशी और चिंता के हमलों का शिकार होने से डरते हैं। नतीजतन, कई युवा समलैंगिक स्कूल छोड़ देते हैं जो उनकी बुनियादी शिक्षा को बाधित करते हैं और कुछ जिनका चरम स्तर पर मजाक उड़ाया जाता है, वे आत्महत्या कर लेते हैं।

कुल मिलाकर, हम कह सकते हैं कि समलैंगिकों का समूह होमोफोबिक समाज के कारण हाशिए, अलगाव और उत्पीड़न की यातनापूर्ण यात्रा का अनुभव करता है। इस तरह, कामुकता ने एक विषमलैंगिकता की ओर किसी की विचारधारा को आकार देने में एक बड़ी भूमिका निभाई है, जहां वे विभिन्न अन्य प्रकार की यौन पहचानों के बारे में भूल गए हैं। इसके द्वारा, समलैंगिकों के जीवन को असामान्य माने जाने से लेकर मृत्यु का मामला बनने तक भिन्नताएं देखी जा सकती हैं।

समाप्ति

यौन अल्पसंख्यकों की उपरोक्त समझ से, अब हम उन्हें यौन सबाल्टर्न की पहचान श्रेणी के तहत पा सकते हैं। वे हेटरोनॉमी शासन से उनके सामाजिक बहिष्कार की विशेषताओं पर सबाल्टर्न विषय के रूप में स्थित रहे हैं। विशेष रूप से, समलैंगिक के कबीले को उनकी यौन प्राथमिकताआं के साथ उनकी हीन भावना के संदर्भ में सबाल्टर्न के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

इसलिए, कोई भी दिल्ली को समलैंगिकों के लिए आशा के शहर के रूप में देख सकता है, जिसने समलैंगिक अधिकारों के लिए अपने पहले सार्वजनिक प्रदर्शन के साथ हेटरोनॉमी समाज में समावेशिता का मार्ग प्रशस्त किया है। 1990 के दशक के बाद से, कई सामाजिक कार्यकर्ता देश भर में गैर–लाभकारी संगठनों के माध्यम से समलैंगिक लोगों को जोड़ने पर काम कर रहे थे। इसके बाद, दुनिया को किसी की यौन वरीयताओं और लिंग पहचान के मानवाधिकार पहलू को उल्लिखित मानवाधिकारों के मानकों के बराबर पहचानने की सख्त आवश्यकता है। मुख्यधारा के समाज के लिए समलैंगिक समुदाय के प्रति कुछ चेतना की भावना दिखाने की आवश्यकता है क्योंकि उनके लिए बहुत कम किया गया है और उनकी बेहतरी और समाज में अधिक समावेश के लिए बहुत कुछ करने की आवश्यकता है।

संदर्भ सूचीः

- अम्बाडे, आरोही. (2020 जुलाई 23). केस सारांशः नवतेज सिंह जौहर वी, भारत सरकार कानून और न्याय मंत्रालय के सचिव हैं। कानूनी दिमाग का अभिसरण, LawleÛ-org। एक्सेस पर http://lawleÛ-org/leÛ&bulletin/case&summary&navtej&singh&johar&v&union&of& इंडिया–थ्र–सैक्रेटरी–मिनिस्ट्री–ऑफ–लॉ–एंड–जस्टिस
- चटर्जी, श्रद्धा. भारत में क्वीर राजनीतिः यौन सबाल्टर्न विषयों की ओर, लंदन और न्यूयॉकः रूटलेज।
- देवी, शकुंतला. समलैंगिकों की दुनिया। नई दिल्लीः विकास पब्लिशिंग हाउस
- ग्राम्सी, एंटोनियो। एंटोनियो ग्राम्सी की जेल नोटबुक से चयन, क्विंटिन होरे और जेफ्री नोवेल स्मिथ। न्यूयॉर्कः लॉरेंस और विशर्ट।
- नरैन, अरविंद और भान, गौतम. (2005). परिचय. में। अरविंद नरेन और गौतम भान (संपादन), क्योंकि मेरे पास एक आवाज हैः क्वीर पॉलिटिक्स इन इंडिया। नई दिल्लीः योडा प्रेस।
- टेलर, चार्ल्स. मान्यता की राजनीति, में, एमी गुटमैन (सं.), बहुसंस्कृतिवादः मान्यता की राजनीति की जांच। प्रिंसटन, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।

♦♦♦♦♦

Aiming High, Touching Sky

सी जी एस

वैश्विक अध्ययन केंद्र

(पूर्वकालिक विकासशील राज्य शोध केंद्र)

अकादमिक अनुसंधान केंद्र भवन

गुरु तेग बहादुर मार्ग

दिल्ली विश्वविद्यालय

दिल्ली– 110007